छायावादी काव्य में राष्ट्रीय भावना

डॉ. मार्तण्ड सिंह,

हिन्दी विभाग

इलाहाबाद डिग्री कॉलेज, इलाहाबाद

संघटक— पी.जी. कॉलेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

'छायावाद' के अभ्युदय-काल में भारत में राष्ट्रीय-भावना का आन्दोलन चल रहा था। 'साहित्य समाज का दर्पण अथवा प्रतिबिम्ब है'—कुछ आलोचकों ने सत्य ही कहा है कि 'राजनीतिक ढंग से जो कार्य गांधीवाद जी ने किया, साहित्यिक ढंग से वही कार्य छायावाद' ने किया। दोनों ने भारतीय जनता के मानस को उत्साहित-प्रेरित किया।

वास्तविकता यह है कि प्रत्येक पराधीन देश में 'राष्ट्रीयता की भावना' का उदय 'पुनरुत्थान भावना' से होता हैं इसका प्रमुख कारण यह है कि विजेता जाति विजित जातियों को दबाने के लिए उनकी सभी प्रकार की शक्तियों को छीनने का प्रयास करती है। भारत पर शासक अंग्रेजों ने भी यही किया। उनको 'बर्बर', 'असभ्य', 'कमजोर' कहा और उनकी सांस्कृतिक-परम्परा को तुच्छ कहा। साथ ही अंग्रेजों ने भारतीय इतिहास की पुरातात्विक सामग्री की खुदाई भी की। इसमें उनका उद्देश्य चाहे जो भी रहा हो, किंतु इससे भारतवासियों में अपने भूले हुए 'अतीत' का बोध हुआ और उनमें आत्म-गौरव का भाव जाग उठा। उन्होंने पराधीनता को झेलते हुए भी अपनी 'अतीत के स्वर्ण-युग' का आश्रय लिया।

प्रसाद ने अपनी परम्परा को स्वीकार किया है और सर्वत्र उससे रस ग्रहण करते देखे जा सकते हैं। वे संस्कृत काव्य-परम्परा से बहुत गहरे प्रभावित हैं। साथ ही बंगला की तत्कालीन काव्य प्रवृत्तियों से भी और यूरोप की नवीन विचारधाराओं से भी। उन्होंने युग से भी प्ररणा ली है और युगीन काव्य प्रवृत्तियों को समाहित कर अपनी कविता को एक नवीन आभा से मण्डित किया है। किन्तु यह स्वीकार करने में कोई हिचक नहीं कि प्रसाद पर सबसे अधिक प्रभाव भारतीय परम्परा और भारतीय चिन्तन का है। वे शायद आधुनिक हिन्दी काव्य के सबसे बड़े भारतीय कवि हैं। संस्कृत साहित्य प्रसाद की प्रेरणा का स्रोत रहा है। उन्होंने अपनी आख्यान प्रधान कविताओं का कथानक प्राय: संस्कृत साहित्य से ही चुना। वे भारतीय संस्कृति के कवि हैं। उनके नाटकों के चरित्र और उनकी 'कामायनी' की श्रद्धा—सब भारतीय संस्कृति के ही प्रतीक हैं। भारतीय परम्परा और भारतीय संस्कृति का प्रेम ही उन्हें अतीत की ओर खींचता है। नाटकों में वे देश के अतीत की ओर जाते हैं। कामायनी में भी अतीत की ओर जाते हैं तथा 'आँसू' में अपने ही प्रेम के अतीत में जाते हैं। यह अतीत प्रेम कवि प्रसाद की एक विशेषता हैं यह अतीत प्रेम नहीं, बल्कि अपनी संस्कृति का प्रेम है। 'विशाख' की भूमिका में प्रसाद लिखते हैं, ''इतिहास का अनुशीलन किसी भी जाति को अपना आदर्श संगठित करने के लिए लाभदायक होता है।..... हमारी गिरी हुई दशा को उठाने के लिए हमारे जलवायु के अनुकूल जो हमारी अतीत सभ्यता है, उससे बढ़कर और कोई भी आदर्श हमारे अनुकूल होगा कि नहीं, इसमें मुझे पूर्ण सन्देह है।'' कहना न होगा कि प्रसाद इन्हीं आदर्शों और मूल्यों के कवि हैं। भारतीय संस्कृति तथा भारतीय दर्शन की लोकमंगल दृष्टि को उन्होंने अपने साहित्य की दृष्टि बनायी है। प्रेम, त्याग, उत्सर्ग, करुणा, आस्था और निष्काम कर्म-भावना पर वे बार-बार जोर देते हैं। उनके नाटक इन मूल्यों को रंखांकित करते हैं। कामायनी में भी श्रद्धा के माध्यम से इन्हीं मूल्यों पर

जोर दिया गया है। प्रसाद जिस काल की उपज हैं, वह काल मूल्यों के विघटन और बिखराव का काल है। पश्चिम और पूरब के मूल्यों में द्वन्द्व का काल है। उस समय भारतीय समाज पर पश्चिमी मूल्य हावी हो रहे थे। प्रसाद ने इसे लक्ष्य किया और एक प्रतिनिधि भारतीय लेखक के दायित्व का निर्वाह करते हुए भारतीय मूल्यों की स्थापना का प्रयास किया।

प्रसाद के काव्य में क्लासिकीय गरिमा है। वे उत्तेजित करने वाले कवि नहीं हैं। उनकी कविता में जीवन और जगत के बारे में एक गहरा मन्थन है। कहना होगा कि प्रसाद एक बौद्धिक कवि हैं। उनके समाधान से कोई भले सहमत न हो पर उनकी अभिव्यक्ति अत्यन्त प्रौढ़ तथा परिष्कृत है। उसमें उबाल और आवेश नहीं है, बल्कि आत्म-मन्थन के बाद की—तूफान के बाद की—शान्ति है। प्रसाद के कृतित्व में इसीलिये सागर की विराट गरिमा दिखायी पड़ती है।

प्रसाद जिस युग में पैदा हुए थे वह भारतीय पराधीनता का युग था। प्रसाद ने राष्ट्रीय गौरव का चित्रण करते हुए भारतवासियों में राष्ट्रप्रेम की भावना भरने की कोशिश की। प्रसाद के सम्पूर्ण साहित्य में भारतीय राष्ट्रीय जागरण की चेतना मुखर हुई है। ये चेतना छायावादी कवियों में सबसे अधिक प्रसाद में है। उनके नाटकों में आत्मगौरव, आत्मविश्वास, साहस और संकल्प अपने चरम रूप में देखा जा सकता है। उनके नाटकों के पात्र अपने देश के लिए अपना सर्वस्व उत्सर्ग कर देने के लिए तैयार रहते हैं। प्रसाद के नाटक उनकी राष्ट्रीय चेतना और अतीत के प्रति उनके अनुराग के लिए विख्यात हैं। इन नाटकों में प्रसाद ने भारतीय इतिहास के गौरवमयी पृष्ठों को अपनी कल्पना से एक बार पुन: उजागर किया है। 'विशाख' की भूमिका में वे लिखते हैं—''मेरी इच्छा भारतीय इतिहास के अप्रकाशित अंश में उन प्रकाण्ड घटनाओं का दिग्दर्शन कराने की है, जिन्होंने हमारी वर्तमान स्थिति को बनाने का बहुत प्रयत्न किया है।'' इसमें कोई सन्देह नहीं कि प्रसाद ने अपने इस लक्ष्य को पूरा किया है। 'चन्द्रगुप्त' में तो वे एक विदेशी महिला के द्वारा भारत का गुणगान करा देते हैं—

अरुण यह मधुमय देश हमारा।

जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।

'चन्द्रगुप्त' नाटक में देश के नव-युवकों में जोश भरते हुए प्रसाद जी देश की स्वतंत्रता के लिए 'उद्बोधन-गीत' में प्रोत्साहित करते हैं—

''हिमाद्रि तुंग श्रृंग से

प्रबुद्ध शुद्ध भारती

स्वयं प्रभा समुज्ज्वला

स्वतंत्रता पुकारती

अमर्त्य वीर पुत्र, दृढ़ प्रतिज्ञ सोच लो,

प्रशस्त पुण्य-पंथ है—बढ़े चलो, बढ़े चलो।।

(चन्द्रगुप्त नाटक)

'स्कन्दगुप्त' नाटक का प्रसिद्ध गीत है, जिसमें कवि ने बताया है कि संस्कृति-सभ्यता का सबसे पहले जन्म भारत में ही हुआ—

''हिमालय के आंगन में, उसे प्रथम किरणों का दे उपहार।

जगे प्रथम हम, लगे जगाने संसार।।''

स्कन्दगुप्त में भारतवर्ष के हजारों वर्षों का स्वर्णिम इतिहास अंकित है।

दरअसल भारतीयता ही प्रसाद की सबसे बड़ी शक्ति और सबसे बड़ी सीमा है। भारतीय दर्शन और चिन्तन उनके साहित्य को शक्ति भी देता है और उसे एक सीमा में सीमित भी करता है। आज के जटिल जीवन की बहुमुखी समस्याओं पर वे अतीतोन्मुखी आध्यात्मिक दृष्टि से विचार करने जग जाते हैं। 'आँसू' का प्रेम अलौकिक और रहस्यवादी होकर कृत्रिम होता है तो 'कामायनी का सामरस्य अव्यावहारिक होकर। वास्तव में प्रसाद की काव्य-चिन्ता द्वैत की चिन्ता है। जीवन में व्याप्त द्वैत उन्हें भीतर से इतना मथता रहता है कि वे अपने अनेक

कृतियों में बार-बार, उसकी चर्चा करते हैं। 'द्वैत', 'विषमता', 'समरसता', 'दुख-सुख', 'आनन्द' जैसी शब्दावली का प्रसाद-साहित्य में सबसे अधिक प्रयोग हुआ है। यह कवि की मूल चिन्ता को प्रकट करती है। प्रसाद द्वैत और विषमता की पीड़ा से मानवता को मुक्त करना चाहते हैं। वे वर्गहीन समाज का आदर्श सामने रखते हैं। राजा और प्रजा का संघर्ष दिखाकर वे अन्याय और अत्याचार के खिलाफ विद्रोह का समर्थन भी करते हैं। इसके अनेक उदाहरण उनके नाटकों में देखे जा सकते हैं। 'चन्द्रगुप्त' और 'ध्रुवस्वामिनी' में एक अत्याचारी और क्लीव राजा को ि◌ंसहासन से बलपूर्वक हटा दिया जाता है। 'ध्रुवस्वामिनी' में ध्रुवस्वामिनी का चरित्र एक स्वतन्त्र अजेय नारी का चरित्र है। वह कहती हैं, ''मैं केवल यही कहना चाहती हूँ कि पुरुषों ने स्त्रियों को अपनी पशु-सम्पत्ति समझकर उन पर अत्याचार करने का अभ्यास बना लिया है, वह मेरे साथ नहीं चल सकता। .....मैं अपनी रक्षा स्वयं करूँगी। मैं उपहार में देने की वस्तु, शीतलमणि नहीं हूँ। मुझमें रक्त की तरल लालिमा है। मेरा हृदय उष्ण है और उसमें आत्मसम्मान की ज्योति है। उसकी रक्षा मैं ही करूँगी। ....संसार मिथ्या है या नहीं, यह तो मैं नहीं जानती, परन्तु आप, आपका कर्मकाण्ड और आपके शास्त्र क्या सत्य हैं, जो सदैव रक्षणीया स्त्री की यह दुर्दशा हो रही है?'' क्या नारी स्वातन्त्र्य के पक्षधर साहित्यकारों ने 'ध्रुवस्वामिनी' से अधिक समर्थ चरित्र निर्मित किये हैं? वस्तुत: प्रसाद का सारा गद्य-साहित्य, अत्याचार और उत्पीड़न के, साम्राज्यवाद के तथा अन्धविश्वास और रूढ़ियों के विरुद्ध है। उनकी कविता भी भारतीय मानववादी परम्परा की कविता है।

महाप्राण निराला अपने युग की चेतना से स्वत: ही प्रेरणा प्राप्त करते हैं। कवि निराला पर अपने युग का प्रभाव तो पड़ा ही, साथ में रामकृष्ण मिशन से बहुत साल तक सम्बद्ध रहने के कारण मिशन की विचारधारा का विशेषकर स्वामी विवेकानन्द के ओजपूर्ण व्यक्तित्व का अधिक प्रभाव पड़ा। यही कारण है कि उनका काव्य राष्ट्रीय सांस्कृतिक नवजागरण की प्रभाती का काव्य माना जाता है।

निराला की प्रारम्भिक रचनाओं में अध्यात्म के प्रति गहरी आस्था दिखाई देती है। उनकी ''तुम और मैं'' कविता इस दृष्टि से एक विशेष अर्थ रखती है। अद्वैत दर्शन की पीठिका पर कवि ने इसकी रचना की है किन्तु इसके साथ-साथ कवि की सांस्कृतिक भावना भी स्पष्टतया देखी जा सकती है।

अध्यात्म को आत्मसात् करने के पश्चात ही निराला ने सांस्कृतिक नवजागरण का जयघोष अपने काव्य में किया है। ''गीतिका'', ''राम की शक्ति पूजा'' एवं ''तुलसीदास'' में निराला की सांस्कृतिक रुचि का विशेष परिचय प्राप्त होता है। माँ भारति के गौरवपूर्ण रूप को कवि ने जिस आस्था के साथ प्रस्तुत किया है, वह अपने में एक प्रार्थना का ही रूप है—

भारति जय विजय करे।
कनक शस्य कमल धरे।
लंका पद तल-शत दल
गर्जितोर्मि सागर जल
धोता शुचि चरण युगल
स्तब कर बहु अर्थ भरे।

निराला जी भारतीय संस्कृति और भारतीय स्वतन्त्रता के कितने बड़े पुजारी हैं, इसका परिचय हमें उनकी 'तुलसीदास' नामक रचना में विशेष रूप से मिलता है। इसकी आरम्भिक पंक्तियों में वे कहते हैं :

भारत के नभ का प्रभापूर्य
शीतलच्छाया सांस्कृतिक सूर्य
अस्तमित आज रे तमस्तूर्य दिग्मण्डल,
उर के आसन पर शिरस्त्राण
शासन करते हैं मुसलमान,
है उर्मिल जल, निश्चलत्प्राण पर शतदल।
रिपु के समक्ष जो था प्रचंड
आतप ज्यों तम पर करोद्दण्ड,
निश्चल अब वही बुंदेलखण्ड आभागत।

वीरों का गढ़, वह कालिंजर,

सिंहों के लिए आज सिंपजर।

भारत के उर के राजपूत,

उड़ गये आज वे देवदूत।

जो रहे शेष, नृप-वेश सूत-बन्दीगण।

इन पंक्तियों में कितनी व्यथा है, कितनी पीड़ा है, भारतीय संस्कृति पर विदेशी संस्कृति के आरोप से कवि कितना मर्माहत है, सहृदय जन इसका सहज ही अनुभव कर सकते हैं। देश की मूल संस्कृति का निरुल्लास, निर्जीव हो जाना स्वयं तुलसीदास जी को जितना कष्टकर हुआ होगा, उससे कम उनका कीर्ति-गान करने वाले निराला जी को नहीं हुआ, ये पंक्तियाँ इसे प्रमाणित कर रही हैं।

जो लोग साम्प्रदायिक कहे जाने के भय से भारतीय संस्कृति के सर्वप्रिय और सर्वमान्य स्वरूप को भी अपना सहज विकास करते देखना नहीं चाहते, उन्हीं की दुर्बलता के प्रति स्वाभिमानी कवि के ये उद्गार हैं, जिन पर उन्हें निर्लिप्त चित्त होकर विचार करना चाहिए।

कवि जब भी संस्कृति के समुज्ज्वल एवं उन्नत पक्ष का उद्घाटन करता है, तब उसमें राष्ट्रीय एवं सामाजिक जीवन स्वत: ही समाये रहते हैं, क्योंकि संस्कृति का अपने राष्ट्र और समाज से गहरा एवं अटूट सम्बन्ध है। निराला ''जागरण'' का महामन्त्र फूंकते हैं तो वह एकांशी न होकर सम्पूर्ण अर्थ में ही जागरण है। ''जागो फिर एक बार'' में निराला ने भारतवासियों को उद्घोषित करते हुए कहा है—

तुम हो महान् तुम सदा हो महान

हैं नश्वर यह दीन भाव

कारयता, पामरता,

ब्रह्म हो तुम

पद रज भी है नहीं

पूरा यह विश्व भार-

जागो फिर एक बार

अंग्रेजों की दमन नीति से तत्कालीन भारत की राजनीतिक चेतना निर्जीव-सी हो गयी थी। भारत हमेशा जगतगुरु रहा है, यह महत्ता भी मृतप्राय हो चली थी, भारतवासियों को अपनी महानता और शक्ति में विश्वास नहीं रह गया था, उनके अन्दर घोर निराशा छा गयी थी, ऐसी नाजुक परिस्थिति में निराला ने अपने इस जागरण गीत से उनके अन्दर आशा का दीप जलाया, उन्हें अपनी शक्ति और महत्ता से अवगत कराया, उनकी आस्था और विश्वास को मजबूत किया। इस रचना में कवि का अद्भुत साहस वहाँ देखने को मिलता है जहाँ उसने अंग्रेजों को स्यार और अपने देशवासियों को शेर कहा है—

''शेरों की मांद में

आया है आज स्यार

जागो फिर एक बार।''

—जागो फिर एक बार

उस समय अंग्रेजों के लिए 'स्यार' शब्द का प्रयोग करना क्रान्तिकारी कवि निराला के ही बूते की बात थी।

इसी प्रकार उनकी एक रचना 'बादलराग' है जिसमें उनकी क्रान्ति का अद्भुत परिचय मिलता है। इसमें उन्होंने सामाजिक विषमता और शोषण के विरुद्ध नारा लगाया है। सच पूछा जाय तो निराला की सामन्तवादी व्यवस्था से कभी नहीं पटी। वे जीवन पर्यन्त शोषण और सामाजिक विषमताओं के विरुद्ध लड़ते रहे।

अतीत के बारे में प्राय: छायावादी कवि ने उसे स्वर्ण-युग, सुन्दर एवं सुखद तो कहा है किन्तु यही कहा है कि 'आह, वह स्वर्ण-युग लौट नहीं सकता— पंत का कहना है—

''कहाँ आज वह पुरातन स्वर्ण काल,

भूतियों का दिगंत छवि-जाल।''

पंत ने परवर्ती रचनाओं में जिस प्रकार भारतीय सांस्कृतिक एवं पौराणिक प्रत्ययों को नवोद्भाषित किया वह भी उनके चिन्तन की एक धरोहर है। 'लोकायतन' महाकाव्य में उन्होंने गांधी, मार्क्स और अरविन्द के समन्वय से जिस लोक-व्यवस्था एवं सांस्कृतिक अवबोध को उजागर किया, वह काव्य-सरस्वती के प्रति उनके याज्जीवन समर्पण-भाव का उज्ज्वल प्रमाण है। इस प्रबन्ध के विविध 'द्वारों' में उन्होंने मानवीय राजनीति, अर्थ-नीति, समाज-नीति एवं सांस्कृतिक सम्बोध की ज्वलन्त समस्याओं के समाधान की ओर अंगुलि-निर्देश किया है। इस काव्य में उन्होंने, न केवल अपनी काव्य-प्रतिभा की प्रबन्धात्मक क्षमता को प्रमाणित किया है, अपितु अपनी जीवन-साधना के समग्र सांस्कृतिक अवबोध को भी प्रतिफलित और रूपायित कर भविष्य के लिए एक नवीन व्यवस्था का भी दिशा-संकेत किया है।

भारतीय संस्कृति एवं एकत्व, ममत्व तथा समत्व की अक्षय सांस्कृतिक पहचान एवं उसकी महान उपलब्धि को जीवन्त तथा क्रियाशील बनाए रखने में महादेवी अग्रगण्य हैं। सांस्कृतिक आध्यात्मिक उत्तराधिकार का निर्वाह वे बाखूबी करती हैं। भारतीय नारी की आधुनिक अस्मिता, पवित्रता, दृढ़ता तथा आत्म-सम्मान का सृजनात्मक-सौन्दर्य उनकी कविता की चेतना को पोषित करता है तो करुण हृदय का स्पन्दन, सत्य और कुटुम्ब की रक्षा के लिए हो रहे विद्रोह की ज्वालाओं को त्याग का ताप भी देता है—

सजनि मैं उतनी करुण हूँ, करुण जितनी रात

सजनि मैं उतनी सजल जितनी सजल बरसात।

महादेवी मुक्ति की आकांक्षा का वह अकम्पित दीप जलाने वाली शक्ति हैं जो गुलामी के बड़े-बड़े तूफानों में भी सजग प्रहरी बनकर स्वतंत्रता के लक्ष्य तक पहुँचता हैं यही दीपक अंतस को भी आलोकित करते हुए अखिल सामाजिकता की युग-चेतना का दीपक बन जाता है। निराशा, अवसाद और परतंत्रता की अंधकारमयी लहरियों को लील जाता है। यही उनकी संकल्प की अनुभूति है। यही दीप भारतीय नारी के स्नेह भरे आत्मदानी-व्यक्तित्व को भी रेखांकित करता है। इसी दीप की प्रकाश पुंज स्वरूपा-लौ दुर्गा बनकर संपूर्ण व्यथा का अंत करती है। साम्राज्यवादी अंधकार से निरंतर जूझने वाली वह महाशक्ति सूर्य, चन्द्रमा तथा तारे रूपी सभी सैनिक जुटाकर प्रकाश के संकल्प बिखेरती रहती हैं। होली के दिन जन्मी महादेवी के व्यक्तित्व की मूल्यवान शक्ति एवं सांस्कृतिक गंध को रेखांकित करते हुए गंगा प्रसाद पाण्डेय लिखते हैं—''होली धरती का निजी उत्सव है, क्योंकि धरती के रूप, रंग, रस तथा गंध होली में सजीव हो उठते हैं। अन्नमयी नवीन फसल आत्म-त्याग द्वारा मानवीय जीवन-साधना का उपहार लेकरउपस्थित होती है और चारों ओर राग-रंग की पिचकारियाँ छूटने लगती हैं। सभी लोग पिछला बैर-भाव भूलकर परस्पर गले मिलते हैं। नये वर्ष का आरंभ होता है। प्रह्लाद ''प्रकष्ट आह्लाद की रक्षा और पूतना (जो पवित्र नहीं है) का अंत होता है। जन्म दिन की सारी विशेषताएँ महादेवी जी के साहित्य में चरितार्थ हैं।''

महादेवी की कविता में ओज तथा प्रसाद गुण के दर्शन भी होते हैं। जागरण का एक गीत देखिए, जिसमें पौरुष पूर्ण ''ओज गुण'' प्रशंसनीय है—

बाँध लेंगे क्या तुझे यह मोम के बंधन सजीले?

पंथ की बाधा बनेंगे तितलियों के पर रंगीले?

धरती-सी महान और हिमालय-सी विशाल महादेवी ''हे चिर महान'' गीता में हिमालय के प्रति एकसूत्रता तथा एकात्मता के भावों को उजागर करते हुए उससे समात्मभाव स्थापित करती हैं और अभेद-भावना के चरम सौंदर्य को आत्मसाक्षात्कार के रूप में प्रस्तुत करती हैं—

मेरे जीवन का आज मूक,

तेरी छाया से हो मिलाप।

स्पष्ट है कि हिमालय के समान अडिग आत्म-सम्मान वाली महादेवी को जीवन के लघुतम रूपों से भी पूरी सहानुभूति है। योगी की तरह समाधिस्थ तथा

सभी राग-द्वेषों से ऊपर उठकर संसार व्यापी दुखों को शीतल शांत जल-स्रोतों की गंगा-धारा बहाकर कोमल सहृदयता का लेप लगाने का जो दायित्व हिमालय निभाता है, उसका पूरा निर्वाह महादेवी भी करती हैं। मनुष्य-जाति के सर्वदा-हित की कामना रखने वाली, भारतीय संस्कृति की चिर-प्रहरी बनी रहने वाली तथा नैतिक मूल्यों की दृढ़ता से स्थापना और रक्षा करने वाली इस हठी तथा विद्रोही कवयित्री ने संसार की प्रत्येक बाधा और रुकावट का जमकर विरोध किया तथा अपने पक्ष से विमुख न होकर सदैव प्रशस्त-मार्ग की अनन्त यात्रा करती रहीं—

घिरती रहे रात!

न पथ रूँथती में गहनतम शिलायें,

न गति रोक पातीं पिघल मिल दिशायें,

2 2 2 2 2

चली मुक्त मैं ज्यों मलय की मधुर बात।

वस्तुत: राष्ट्रीय या जातीय भावना के इतिहास में 'पुनरुत्थान प्रथम चरण' है, तो 'देश-प्रेम द्वितीय चरण' है। अपने गाँव तथा प्रांत की सीमा से बाहर निकल कर संपूर्ण देश को अपनी जन्मभूमि समझना, 'राष्ट्रीयता' की भावना है।

द्विवेदी-युगीन स्थूल एवं संकीर्ण देश-प्रेम से छायावादी कवियों का देश-प्रेम 'विश्व-मानवतावाद' की व्यापक-भूमि पर दिखाई पड़ता है। यहाँ संकीर्णता की सीमा टूट जाती है। छायावादी कवियों की भारत-भूमि ऐसी है, जिससे क्षितिज को भी एक सहारा मिलता है। क्षितिज और अनंत की लहरें 'राष्ट्रीयता के बीच से' अन्तर्राष्ट्रीयता की ओर संकेत करती है।

यद्यपि देश हमारा स्वतंत्र हो गया। अंग्रेज चले गए। ि◌कंतु देश की बहु-संख्यक जनता गरीब, दीन, दुखी ही है। मुट्ठी भर लोग धनी-मानी हैं। वे गरीबों की दीन-दशा पर ध्यान नहीं देते हैं। ढोंगी धार्मिक बने हुए हैं। महाकवि निराला की 'अनामिका' संग्रह की 'दीन' शीर्षक कविता इस ढोल की पोल को उधेड़ती है।

छायावाद ने सम-सामयिक 'राष्ट्रीय आन्दोलन' को प्रोत्साहित, प्रेरित तथा प्रभावित किया। सभी कवियों ने किसी न किसी रूप में राष्ट्रीय आन्दोन को प्रभावित किया है, इसमें कोई संदेह नहीं है। इन सब में महाकवि 'निराला' सबसे अग्रणी हैं। इनमें प्रगतिवादी चेतना तथा सर्वहारा वर्ग के प्रति विशेष सहानुभूति दिखाई पड़ती है।

सन्दर्भ-सूची

1. डॉ. नामवर सिंह, `छायावाद', पृ. ४५
2. कामायनी (आशा सर्ग)
3. आँसू
4. सुमित्रानन्दन पंत `मौन नियंत्रण'
5. वही (परिवर्तन)
6. महादेवी वर्मा (दीप शिखा)
7. जयशंकर प्रसाद (चन्द्रगुप्त)
8. वही
9. वही (स्कन्दगुप्त)
10. वही ध्रुवस्वामिनी
11. सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला (भरति जम विजम करे) (गीतिका)
12. वही (तुलसीदास)
13. जागो फिर एक बार (परिमल)
14. महादेवी वर्मा दीपशिखा
15. नामवर सिंह, छायावाद ,पृ. ८५

Copyright © 2017, Dr. Martand Singh. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.